डॉ. सम्पतकुमार जैन

होम्योपैथिक चिकित्सा सर्वसुलभ व अहानिकारक है

होम्योपैथी के प्रति मेरे रुझान का सबसे बड़ा कारण यह भी रहा कि जैन दर्शन के प्रति मेरे मन में सदा से दृढ़ श्रद्धान रहा है। मेरा मानना है कि स्थूल शरीर पर जो रोग लक्षण प्रकट होते हैं वे भीतरी विकारों का ही परिणाम हैं। हमारा शरीर पंचभूतों से बना है – आनन्दमय कोश, विज्ञानमय कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश तथा अन्नमय कोश। जब इन कोशों में किसी प्रकार की विकृति उत्पन्न हो जाती है तो लक्षणों द्वारा ही वह परिलक्षित होती है। रोग और कुछ नहीं, व्यक्ति के कर्मफल के द्योतक हैं और हर व्यक्ति को कर्मफल तो भोगना ही पड़ता है। चाहे वे कर्म इस जन्म में किये हों या पूर्व जन्म के संचयित हों। परन्तु सूक्ष्मीकृत होम्योपैथिक औषधियाँ असामान्य हुई जीवन उर्जा को, जो उसके कोशों से परिलक्षित हो रही हैं, उसको इस प्रकार से शान्त एवं सहजता से संयमित कर देती है कि कर्मफल भी पूरा हो जाय और रोग लक्षण भी चले जायें।

बिना आत्म-चिन्तन किये जीवन के बारे में और उसके संरक्षण और प्रतिरक्षण के बारे में कैसे सोचा जा सकता है? शरीर में जब तक आत्मा मौजूद है तभी तक चिकित्सा की बात सोची जा सकती है, अगर शरीर में से आत्मा ही निकल गई तो फिर क्या कोई दवा या पद्धति शरीर को फिर से जीवित कर सकती है?

इस समय कई प्रकार की चिकित्सा पद्धतियाँ देश में चल रही हैं – (१) विरोधी विधान याने एन्टीपैथी, (२) सम विधान याने आइसोपैथी, (३) असमान विधान याने एलोपैथी, (४) सद्दृश्य विधान याने होम्योपैथी। इनके अलावा प्राकृतिक चिकित्सा, एकूप्रेशर, एकूपंचर आदि भी कई पद्धतियाँ इस समय चलन में हैं।

हमें स्मरण रखना चाहिये कि एलोपैथी रोगी की नहीं, रोग की चिकित्सा करती है। एलोपैथी का लक्ष्य शरीर के भीतर बैठे आत्मा याने सूक्ष्म पुरुष की चिकित्सा न होकर शरीर के विभिन्न अंगों, जैव रासायनिक संगठनों, प्रक्रियाओं की चिकित्सा करना है। एलोपैथी एक ही समय में आइसोपैथी, हैट्रोपैथी, एन्टीपैथी आदि सभी सिद्धान्तों का प्रयोग कर सकती है क्योंकि उसमें मानव शरीर के भौतिक व रसायनिक संगठनों द्वारा अध्ययन किया जाता है। पर होम्योपैथी में रोग के आधार पर कोई दवा नहीं दी जाती। रोग एक होने पर भी, लक्षण सादृश्य होने पर भी प्रत्येक रोगी को औषधि उसके व्यक्तित्व अर्थात् व्यक्तिकरण के आधार पर दी जाती है। तभी रोग का पूर्ण रूप से निष्कासन होकर रोगी शरीर व मन से प्रसन्न एवं स्वस्थ बन सकता है। एलोपैथी में रोग निरसन नहीं होता, उसे बलात् दबा दिया जाता है इसलिए कालान्तर में वह विभिन्न रूप धारण कर, किसी भी अंग को, कई बार तो पहिले से ज्यादा महत्वपूर्ण अंग को आक्रांत कर बैठता है और असाध्य-सा बन सकता है।

होम्योपैथी की यह भी मान्यता है कि तरुण रोग आते तेजी से और कभी-कभी विकराल रूप भी धारण कर जाते हैं, पर अपना भोगकाल समाप्त हो जाने के बाद रोगी को स्वस्थ बनाकर बिदा हो जाते हैं या उनके भोगकाल के समय कोई बाधा डाली गई तो वे जान-लेवा भी साबित हो जाते हैं। यदि उनके मार्ग में कोई बाधा नहीं डाली गई तो वे शरीर में कोई स्थायी विकृति भी पैदा नहीं करते। हाँ, जब उनको एलोपैथी जैसी तेज जहरीली दवाओं द्वारा दबा देने का प्रयत्न किया जाता है तो रोग दब जाने से तरुण रोग जीर्ण रूप भी धारण कर सकता है और उसको दबाने के लिये यदि विषाक्त दवायें प्रयोग में लाई गईं तो उनके दुष्परिणाम रोग निरसन के बाद भी रोगी को भोगने ही पड़ते हैं।

जैसे आयुर्वेद ने माना है कि शरीर में वात-पित्त-कफ में जो एक समरसता है, वह जब असन्तुलित हो जाती है तो ही रोग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पैदा हो पाता है। वैसे ही होम्योपैथी में भी माना गया है कि जीण रोग तभी प्रकट होते हैं जब सोरा, साइकोसिस, सिफलिस मनुष्य शरीर को अपना घर बना लेते हैं। इनके कारण रोग शरीर में गहरा पैठकर शरीर के महत्वपूर्ण अंगों को आक्रांत कर मानव को स्थायी बीमार बना देता है और हम जानते हैं कि सोरा मन की कलुषित अवस्था का द्योतक है तो गनोरिया व सिफलिस संसर्गजनित दोष हैं। मन कलुषित होकर जब कोई स्त्री व पुरुष ऐसे स्त्री या पुरुष से संसर्ग कर बैठते हैं तो पहले से ही गनोरिया या सिफलिस से ग्रसित है तो स्वस्थ व्यक्ति को भी यह रोग जकड़ लेता है और जब इस रोग से शीघ्र मुक्ति पाने के लिए तेज जहरीली दवाओं का वह सेवन करता है तो रोग लक्षण दबकर वह जहर भीतर पहुँचकर मानव को कई असाध्य बीमारियों का घर बना डालता है। इस दुष्कर्म का फल उसको ही नहीं उसकी कई पीढ़ियों तक को भोगना पड़ता है।

पूर्व जन्म में किये गये दुष्कर्मों का प्रभाव तो फिर भी इस जन्म में कर्मफल भोग कर शीघ्र शान्त हो जाता है पर जब व्यक्ति के साथ इस जन्म में किये पाप भी जुड़ जाते हैं तो स्थिति ज्यादा गम्भीर बन जाती है। जब ये दोष शरीर में गहराई तक प्रवेश कर जाते हैं तो होम्योपैथी की मियाज्मेटिक दवाएँ उन कर्मफलों को हल्का करने में रोगी की बहुत मदद करती हैं। यह कार्य अन्य किसी पैथी से नहीं हो पाता। एलोपैथी तो रोग की जटिलता को और बढ़ा ही सकती है। क्योंकि उन्हें शरीर व मन पर उभर रहे लक्षणों को दबाने के लिये निरन्तर ऐसी दवाएँ अधिकाधिक मात्रा में खिलानी पड़ जाती हैं जिनके जहरीले प्रभाव के कारण स्थिति सुलझती नहीं, उलझती ही चली जाती है और अन्त में वे कह उठते हैं, अब हमारे पास रोगी को ठीक करने के लिये कोई दवा नहीं बची, अब तो उसे इसी हालत में जीने की आदत डालनी होगी।

इसलिये होम्योपैथी हमें यही सिखाती है कि यदि हम जीवन में सुख व शान्ति से जीना चाहते हैं तो अपने विचारों को शुद्ध व निर्मल बनाये रखने के अलावा कोई चारा नहीं है। जितना हम अपने को बाह्य सुखों से विलग कर, अपने आप में स्थिर होने का प्रयत्न करेंगे, क्रोध, मान, माया, लोभ पर अंकुश रखेंगे उतनी ही शारीरिक व मानसिक शान्ति हासिल कर हम निरोगी जीवन हासिल कर पायेंगे। होम्योपैथी ही आज सबसे ज्यादा सुलभ, कारगर, सस्ती व ऐसी अहानिकारक पद्धति है, जिसका कोई मुकाबला नहीं। इसको अध्ययन कर आत्मसात करना भी ज्यादा कठिन नहीं है बशर्ते हम रोज एक घंटा इसका नियमित स्वाध्याय करें। हम क्वालिफाइड डॉक्टर न भी हो पायें पर इतना तो ज्ञान व अनुभव हमें सहज मिल सकता है कि हमें अपनी छोटी-मोटी बीमारियों के लिये व परिवार तथा इष्ट मित्रों की बीमारियों के लिये व्यर्थ डॉक्टरों के दरवाजे न खटखटाना पड़े। डॉ. एस. के. दूबे ने मात्र एलेन्स-की-नोट पर अपनी मास्टरी हासिल कर होम्योपैथी की जादुई शक्ति को सबके सामने सिद्ध करके बता दिया कि आज उनके पढ़ाये छात्र जहाँ-जहाँ भी गये उन्होंने होम्योपैथी का परचम सब दूर फहरा दिया। यदि किसी में भी समर्पण भाव व निष्ठा हो तो फिर कठिन कुछ भी नहीं।

जयपुर

■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org